... इस दिशा में प्रयत्नशील है।

उष्ण कटिबन्धीय व्यापारिक बागानी कृषि

विश्व में अनेक फसलें बागानों में व्यापारिक दृष्टिकोण से उपजायी जाती हैं। इस प्रकार की कृषि पद्धति में विविध फसलों के उत्पादन का वितरण भी अधिक व्यापक है परन्तु इनमें अधिक महत्वपूर्ण फसलें उष्णकटिबन्धीय प्रदेशों में ही उपजती हैं। कपास, तम्बाकू तथा चाय जैसी कुछ ही फसलें उपोष्ण कटिबन्धों में उपजायी जाती हैं। उपोष्ण कटिबन्धों में उपजने वाली फसलों की अपनी अलग-अलग विशेषतायें होती हैं जिनका विवेचन पहले किया गया है। कृषि प्रदेश के दृष्टिकोण से उष्ण कटिबन्धीय बागानी कृषि अधिक महत्वपूर्ण है।

उष्ण कटिबन्धीय बागानी तीन कृषि क्षेत्रों में मिलती हैं—(1) लैटिन अमेरिका (2) अफ्रीका तथा (3) दक्षिण एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया।

इस कृषि प्रदेश में निम्नलिखित विशेषतायें मिलती हैं।

(1) उष्ण कटिबन्धीय बागानी कृषि किसी भी क्षेत्र के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के अल्पांश पर ही होती है। इसी-लिये इस प्रकार की कृषि विस्तृत क्षेत्र पर नहीं, बल्कि छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में मिलती है।

(2) किसी क्षेत्र विशेष में फसलों का विशिष्टीकरण मिलता है। इस प्रदेश में उपजने वाली फसलों में केला, कोको, कहवा, सीसल, रबर, गन्ना, नारियल, मिर्च-मसाले, चाय आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें एक क्षेत्र में एक-दो फसलें ही प्रधानतः उपजायी जाती हैं। केला प्रधानतः पश्चिमी द्वीप समूह तथा मध्य अमेरिका में उपजता है। क्यूबा में गन्ना की प्रधानता है। वेनेजुएला में समुद्र तटों पर गन्ना, कोलम्बिया पठार पर कहवा, इक्वेडोर के समुद्र तट पर केला, पीरू के समुद्र पट पर कपास तथा गन्ना, ब्राजील पठार पर कहवा तथा समुद्र तट पर गन्ना एवं कोको उपजते हैं। अफ्रीका में कहवा तथा कोको पश्चिमी अफ्रीका के देशों में, कहवा पूर्वी अफ्रीका के पठार पर, तथा गन्ना एवं सीसल पूर्वी अफ्रीका तट एवं मेडागास्कर के उत्तरी तट पर पैदा होते हैं। भारत के दक्षिणी भाग में नारियल तथा कहवा एवं नीलगिरि पर्वत पर चाय तथा श्रीलंका के पठारी भाग में चाय प्रमुख हैं। मलयेशिया तथा हिन्देशिया में रबर की प्रधानता है। भारत में असम की पहाड़ियों में चाय के बगान भी इसी प्रदेश में सम्मिलित किये जा सकते हैं क्योंकि उपोष्ण प्रदेश में होते हुए भी इनकी सभी विशेषतायें उष्णकटिबन्धीय बागानी कृषि की ही हैं। फिलीपीन्स में नारियल का अधिक उत्पादन होता है।

(3) इस प्रकार की कृषि फार्मों पर होती है। जो इन प्रदेशों में अन्य प्रकार की कृषि के लिये प्रयुक्त खेतों की अपेक्षा बहुत बड़े होते हैं। ऐसे फार्मों पर बागान, कार्यालय, माल तैयार करने के कारखाने तथा श्रमिकों के आवास आदि की व्यवस्था रहती है।

(4) इस कृषि में श्रम का अधिक उपयोग होता है। इसमें उपजने वाली सभी फसलें ऐसी हैं जिनके पौधों की काफी देखभाल करने से ही अधिकतम उत्पादन हो सकता है। उदाहरणार्थ केला, चाय, रबर, कहवा आदि फसलों में अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। मशीनों का उपयोग केवल प्रारम्भ में जंगल साफ करने तथा फार्म तैयार करने के लिये किया जा सकता है।

(5) इस कृषि में अधिक पूंजी का विनियोग होता है। प्रायः पूंजी शीतोष्ण कटिबन्धीय विकसित देशों की होती है। फार्म की व्यवस्था करने के लिये व्यवस्थापक, प्रशिक्षित कारीगर, मशीनें, दवाइयाँ एवं अन्य आवश्यक वस्तुयें विकसित देशों की ही होती हैं। वस्तुतः बागानी कृषि का स्वामित्व विकसित देशों के ही हाथ में होता है। जहाँ कहीं हाल में स्वतन्त्र हुए देशों में बागानों का राष्ट्रीयकरण हो गया है वहाँ अब स्वामित्व राष्ट्रीय सरकारों का हो गया है। सभी बागान प्रारम्भ में विदेशियों द्वारा ही विकसित किये गये थे।

(6) इन फसलों की उपज की खपत भी अधिकांशतः शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में ही होती है। इस प्रकार यह व्यापारिक कृषि है क्योंकि उपज का प्रधानतः निर्यात होता है।

(7) बागान प्रायः परिवहन के सुगम साधनों के निकट होते हैं। समुद्रतटीय क्षेत्रों में बागान अधिक मिलते हैं। आन्तरिक भागों में बगानी कृषि वहीं विकसित होती है जहाँ रेल परिवहन उपलब्ध है।

उष्ण कटिबन्धीय बागानी कृषि की विशेषतायें निम्न प्राकृतिक तथा मानवीय तत्वों से सम्बन्धित हैं :—

प्राकृतिक वातावरण—इस कृषि प्रदेश में उपजने वाली सभी फसलें इस प्रकार की हैं जिन्हें वर्ष भर अधिक तापमान तथा अधिक एवं नियमित वर्षा की आवश्यकता होती है। उष्ण कटिबन्धीय भागों में ही वर्ष भर इनके अबाध विकास के लिये ताप तथा पर्याप्त नमी उपलब्ध हो सकती है। परन्तु उष्ण कटिबन्ध में मिट्टी की उर्वरा शक्ति के ह्रास की समस्या भी उत्पन्न होती है। इसके निवारण के लिये मिट्टी विशेषज्ञों की सहायता से मिट्टी की उत्पादन क्षमता कायम रखने का हर सम्भव प्रयास करना पड़ता है। विविध प्रकार के रोग भी पौधों को लगते हैं जिसके लिये दवाइयाँ छिड़कना अनिवार्य होता है। कभी-कभी बगानों के स्थान में परिवर्तन भी करना पड़ता है। मध्य अमेरिका के केला बागान इसके उदाहरण हैं। 1930 ई० के पहले केला बागान पनामा, कोस्टारिका तथा निकारागुआ के पूर्वीय समुद्र तटों पर थे। परन्तु 'पनामा रोग' के अत्यधिक प्रकोप का निवारण न कर सकने के कारण पूर्वी तट पर बागान उजड़ गये तथा पश्चिम तट पर बागान लगाये गये जहाँ अपेक्षाकृत शुष्क वातावरण होने के कारण यह रोग नहीं लगता। वर्षा एवं ताप के अतिरिक्त हवा की दिशा एवं गति तथा धरातल का ढाल भी बागानों की स्थिति को प्रभावित करते हैं। मध्य अमेरिका एवं पश्चिमी द्वीप समूह के पूर्वी तटों पर आँधी-तूफान से केला तथा गन्ना को काफी क्षति पहुँचती है। केला बागानों के पूर्वी तट छोड़ने का यह भी एक कारण था। बागानी कृषि में पौधों की जड़ में पानी न लगने देने के लिए ऐसी ढालू जमीन की आवश्यकता होती है जहाँ जलप्रवाह में कठिनाई न हो पर साथ ही गहरी एवं उपजाऊ मिट्टी भी उपलब्ध हो। यही कारण है कि उष्ण कटिबन्धीय बागान प्रायः समतल मैदान पर नहीं प्रत्युत् साधारण ढाल वाले समुद्रतटीय मैदानों तथा पठारों पर मिलते हैं।

मानवीय तत्त्व—उष्ण कटिबन्धीय बागानी कृषि की स्थिति प्राकृतिक वातावरण से निर्धारित होती है परन्तु; अन्य विशेषताएँ मानवीय तत्वों से सम्बन्धित हैं। श्रम की अधिक आवश्यकता होने के कारण यह कृषि उन उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में अधिक विकसित होती है जहाँ जनसंख्या का अधिक घनत्व मिलता है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया में रबर का उत्पादन अधिक विकसित होने का यही कारण है। 1900 ई० के पूर्व रबर केवल ब्राजील में आमेजन घाटी में उत्पन्न होता था। रबर के पेड़ के बीज को बाहर ले जाना भी वर्जित था। किसी प्रकार एक अँगरेज रबर के बीज देश से बाहर ले जाने में सफल हुआ पौधों को मलाया में लगाया गया। इसके बाद दक्षिण-पूर्वी एशिया में रबर का उत्पादन बड़ी तेजी से बढ़ने लगा और अब इसका लगभग सम्पूर्ण उत्पादन यहीं होता है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के मुकाबले आमेजन की घाटी में रबर उत्पादन के ह्रास के कई कारणों में से सर्वप्रधान कारण यह था कि आमेजन घाटी में जनसंख्या की कमी के कारण व्यवस्थित बागान लगाना सम्भव नहीं था। वहाँ रबर का उत्पादन केवल जंगली पेड़ों से रबर के 'लेटेक्स' का संग्रह करने से ही होता था। इन पेड़ों के वन दूर-दूर होने से लेटेक्स संग्रह के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती थी परन्तु जनसंख्या बहुत कम होने से मजदूर मिलना कठिन था। आवागमन की असुविधा से यह कठिनाई और बढ़ जाती थी। रबर के अतिरिक्त अन्य फसलें भी वहीं विकसित हुई हैं जहाँ अपेक्षाकृत अधिक जनसंख्या मिलती है। मध्य अमेरिका, पश्चिमी द्वीपसमूह तथा दक्षिणी अमेरिका के समुद्रतटों पर अपेक्षाकृत अधिक श्रम सुलभ है। पश्चिमी अफ्रीका एवं पूर्वी अफ्रीका के पठारी भागों में भी अधिक नीग्रो तथा भारतीय लोग मिलते हैं। परन्तु वहीं मध्य अफ्रीका में जहाँ प्राकृतिक वातावरण इन फसलों के अनुकूल है पर जनसंख्या का अभाव है, बागानी कृषि विकसित नहीं हुई है। परिवहन के साधनों की उपलब्धता भी इस प्रकार की कृषि के लिये अनिवार्य होती है क्योंकि इसका उत्पादन निर्यात के लिए होता है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया में इस प्रकार के कृषि के अधिक विकसित होने का एक कारण यह भी है कि ये देश अन्तर्राष्ट्रीय सामुद्रिक परिवहन के मार्ग पर पड़ते हैं। विश्व के अन्य भागों में भी बागानी कृषि समुद्रतटों पर ही इसलिये भी होती है कि निर्यात में सुविधा हो। बागानी कृषि में उपजने वाली फसलों की माँग शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में अधिक होती है परन्तु उन देशों में इन फसलों को उपजाने के उपयुक्त प्राकृतिक वातावरण नहीं है अतः इन देशों ने अपनी पूँजी लगाकर उष्णकटिबन्धीय भागों में

इस कृषि को विकसित किया। इसमें तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का भी अधिक योग था। अधिकतर बागानी कृषि वाले देश किसी न किसी शीतोष्ण कटिबन्धीय देश के उपनिवेश थे। अतः उनको पूँजी डूबने का भय नहीं था। दूसरी ओर शीतोष्ण कटिबन्धों में इन कृषि वस्तुओं को किसी प्रकार की प्रतियोगिता का सामना नहीं करना पड़ता था अतः इनसे बहुत लाभ होता था। अब प्रायः सभी उष्ण कटिबन्धीय देश स्वतन्त्र हो गये हैं, अतः इनके लिये बागानी कृषि फसलें विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के प्रमुख साधन हो गये हैं। चीनी तथा रबर की, अब चुकन्दर से बनी चीनी तथा कृत्रिम रबर (Synthetic Rubber) से प्रतियोगिता होती है पर इसको भी अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों द्वारा कम किया जाता है। संयुक्त राज्य तथा पश्चिमी यूरोप के देश कुछ उष्णकटिबन्धीय देशों के कृषि पदार्थ की विशेष सुविधायें प्रदान करते हैं। उष्णकटिबन्धीय बागानी कृषि का विकास तभी हुआ जब कि शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में औद्योगिक-आर्थिक विकास के चलते इस कृषि की उपजों की माँग बढ़ी। इस प्रकार, यह कृषि बहुत अधिक हद तक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर निर्भर है तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की परिस्थिति में परिवर्तन से बहुत प्रभावित होती है।